International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.10 No.2 Nov – Dec 2022

'सौंदरनंद' महाकाव्य में प्रकृति-चित्रण

डॉ. लूनेश कुमार वर्मा
(व्याख्याता), शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय छछानपैरी विकास खंड-अभनपुर, जिला रायपुर (छत्तीसगढ़)
Corresponding Author- **डॉ. लूनेश कुमार वर्मा**
Email: luneshverma@gmail.com
DOI- 10.5281/zenodo.7523716

सारांश- महाकवि अश्वघोष संस्कृत के प्रारंभिक काल के कवि हैं। महाकवि अश्वघोष के काव्य सौंदरनंद में दार्शनिकता की प्रधानता होने पर भी प्रकृति का सुंदर और मनोरम चित्रण हुआ है। प्राचीन काल में ऋषि-मुनि प्रकृति की गोद में ही वास करते हुए तप साधना करते थे। महाकवि अश्वघोष ने कपिल मुनि के आश्रम के प्राकृतिक सौंदर्य का सुंदर और मनोरम चित्रण किया है। मुनि के आश्रम के आस-पास हिंसक पशु भी अपना व्यवहार आश्रम के अनुकूल कर लिया करते थे। अश्वघोष द्वारा किए गए नारी सौंदर्य वर्णन में उनका प्रकृति के प्रति विशेष अनुराग देखने को मिलता है। नारी के रमणीय और कमनीय रूप का वर्णन करने के लिए बहुधा अनेक उपमानों का प्रयोग किए जाने की परंपरा का निर्वहण कवियों द्वारा किया जाता रहा है। प्रेम करने वालों के लिए प्रकृति प्रेम का आलंबन बन जाती है। नायक-नायिका के संयोगावस्था में किए जाने वाले प्रेमक्रियाकलापों का उद्दीप्त वर्णन करने में प्रकृति के सुंदर मनोहर रूप की महत्वपूर्ण भूमिका होती है किंतु वियोग की अवस्था में यह विरहाग्नि को उद्दीप्त और चंचल कर देती है। समर्थ कवि प्रकृति के रूपों के माध्यम से विभिन्न चेष्टाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। अश्वघोष द्वारा प्रकृति के माध्यम से उपदेशात्मक वचन कहे गए हैं। प्रकृति के सहज, स्वाभाविक वर्णन में कवि अपनी कल्पना व बुद्धि के प्रयोग से विभिन्न अलंकारों का प्रयोग करते हुए नवीन चमत्कार उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं। जहाँ कहीं भी महाकवि अश्वघोष ने प्रकृति के सौंदर्य का चित्रण किया है, वे दृश्य अनुपम और सजीव बन पड़े हैं।

मुख्य शब्द- प्रकृति, मुनि के आश्रम, नारी सौंदर्य, उद्दीपन, उपदेशात्मकता, सहज, स्वाभाविक वर्णन।

महाकवि अश्वघोष संस्कृत के प्रारंभिक काल के कवि हैं। इनकी रचनाओं में समासयुक्त पदावलियों का समावेश कम हुआ है। इसलिए संस्कृत की जटिलता इनके काव्य में कम है। "अश्वघोष को संस्कृत साहित्य के प्रारंभिक कवियों में गिना जाता है, जब संस्कृत साहित्य में जटिलता का समावेश नहीं हुआ था।"[1] महाकवि अश्वघोष के काव्य सौंदरनंद में दार्शनिकता की प्रधानता होने पर भी प्रकृति का सुंदर और मनोरम चित्रण हुआ है। दार्शनिक काव्य में प्रकृति का रमणीय वर्णन कवि के प्रकृति प्रेमी होने का प्रमाण है। सौंदरनंद काव्य में अनेक ऐसे स्थल हैं, जहाँ प्रकृति का अनुपम स्वरूप प्रस्तुत किया गया है। प्राकृतिक सौंदर्य वर्णन में कवि चित्रात्मक भाषा का प्रयोग बड़ी कुशलता से करते हैं। कोमलकांत पदावलियों के माध्यम से प्रस्तुत अर्थव्यंजना अनुपम बन पड़ा है।

प्राचीन काल में ऋषि-मुनि प्रकृति की गोद में ही वास करते हुए तप साधना करते थे। उनके आश्रम का सजीव दृश्य उपस्थित करने में निश्चित रूप से कवियों के द्वारा वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन रुचि लेकर किया जाता रहा है। वनप्रांत में कपिल मुनि का आश्रम सुंदर लताओं और विविध वृक्षों से घिरा हुआ था। वहाँ का मार्ग बहुत ही कोमल और स्निग्ध घासों से युक्त था। मुनि के आश्रम में नित्य हवन किया जाता था, जिसके कारण हवि धूम के प्रभाव से आश्रम के चारों ओर का वातावरण बादल के समान प्रतीत होता था। मानो मृदु और स्निग्ध सिकतामय पावन व केसर शय्या से पीतवर्णी भूभाग से उस आश्रम का अंगराग हुआ था। सौंदरनंद काव्य में महाकवि अश्वघोष ने कपिल मुनि के आश्रम के प्राकृतिक सौंदर्य को चित्रित करते हुए लिखते हैं-

चारुवीरुतरुवनः प्रस्निग्धमृदृशाद्वलः।
हविर्धूमवितानेन यः सदा इवावभौ।।
मृदुभिः सैकतैः स्निग्धैः केसरास्तरपाण्डुभिः।
भूमिभागैरसंकीर्णैः साङ्गराग इवाभवत्।।[2]

यहाँ कवि के द्वारा किया गया प्राकृतिक सौंदर्य चित्रण प्रस्तुत विधान के माध्यम से किया गया है, जो अत्यंत मनोरम है। जब कवि किसी चरित्र या घटना का चित्रण करता है तो उसकी पृष्ठभूमि में वातावरण का वर्णन होता ही है। वातावरण के चित्रण से घटित घटना सहज, विश्वसनीय, जीवंत और व्यावहारिक बन पड़ती है। वर्णित घटना या चरित्र के अनुकूल वातावरण निर्माण होने से वर्णन प्रभावी बनता है। कार्य व्यवहार और प्रकृति के मध्य परस्पर तादात्म्य स्थापित होने पर

समरसता की स्थिति सहज निर्मित होती है जिससे किया जाने वाला वर्णन अधिक प्राणवान और प्रभावपूर्ण बनता है। महाकवि अश्वघोष द्वारा कपिल मुनि के आश्रम वर्णन में प्राकृतिक दृश्यों का संयोजन कुछ इसी प्रकार किया गया है। मुनियों की तपस्थली एकांत व शांत स्थल में हुआ करता था। कपिल मुनि का आश्रम भी हिमाच्छादित श्वेतांचल में था। चारों ओर प्रचुर फल-पुष्प से सम्पन्न वनों से वह आश्रम साधन-संपन्न मानव की तरह सुशोभित हो रहा था। वन प्रांत में उत्पन्न होने वाले अनाज और फलों से संतुष्ट, स्वस्थ, शान्त और अभिलाषाशून्य तपस्यारत ऋषियों से परिपूर्ण होने पर भी वह आश्रम शून्य की प्रतीत हो रहा था। अश्वघोष कपिल मुनि के आश्रम के वातावरण का वर्णन करते हुए कहते हैं-

पर्याप्तफलपुष्पाभिः सर्वतो वनराजिभिः।
शुशुभे ववृधे चैव नरः साधनवानिव॥
नीवारफलसंतुष्टैः स्वस्थैः शान्तैः अनुत्सुकैः।
आकीर्णोऽपि तपोभृद्भिः शून्यशून्य इवाभवत्॥[3]

प्रकृति-चित्रण में कवि अपने अनुराग को अभिव्यक्त करने के लिए कल्पना से विभिन्न अलंकारों का आश्रय लेता है, तब वर्णन और विशिष्ट हो जाता है। कवि की कल्पना से चित्रित प्राकृतिक दृश्य अनुपम बन पड़ता है। मुनि के आश्रम में यज्ञ-हवन करने के लिए बनाए गए पवित्र वेदियों पर शयन करते हुए हरिण ऐसे सुशोभित प्रतीत होते हैं, जैसे- लावे और माधवी पुष्पों के साथ वे उपहार स्वरूप चढ़ाए गए हों। कवि के द्वारा सूक्ष्म दृष्टि से रंग-बिरंगे माधवी के पुष्पों में हरिणकों की कायिक छवि का चित्रांकन अत्यंत नवीन और सम्मोहक प्रतीत होता है। कवि अश्वघोष के शब्दों में-

विरेजुर्हरिणा पत्र सुप्ता मेध्यासु वेदिषु।
सलाजैर्माधवीपुष्पैरुपहाराः कृता इव।।[4]

मानव जीवन और प्रकृति का अटूट संबंध है। विभिन्न काव्यों में वर्णित प्रकृति और घटनाओं की योजना में जीवन और प्रकृति का निर्दोष संबंध वर्णित है। यह संबंध अत्यंत सहज स्वाभाविक और जीवंत प्रतीत होता है। मुनियों के आश्रम आसपास विचरण करने वाले वन्य जीवों में भी तपस्यारत मुनियों का प्रभाव व स्वभाव झलकता है। मुनियों का स्वभाव शरणागत वत्सल का होता है। ऐसे में शरण में आए हुए प्राणी निर्भय होकर विचरण करते हैं। कपिल मुनि के आश्रम के आस-पास हिंसक पशु भी अपना व्यवहार आश्रम के अनुकूल कर लिया करते थे। इसलिए पशु अपना हिंसक व्यवहार छोड़ देते थे और सब प्राणी भयत्याग निःसंकोच विचरण करते थे। अश्वघोष कपिल मुनि के आसपास विचरण करने वाले वन्य पशुओं के व्यवहार के विषय में लिखते हैं-

अपि क्षुद्रमृगा यत्र शान्ताश्चेरु समं मृगैः।
शरण्येभ्यस्तपस्विभ्यो विनयं शिक्षिता इव।।[5]

प्रेम प्रसंगों के वर्णन में नारी के सौंदर्य वर्णन सहज और स्वाभाविक होता है। नारी के सौंदर्य श्री की वृद्धि के लिए प्रकृति के विभिन्न उपादानों का उपयोग कवियों ने मुक्त हस्त से किया है। नारी के कमनीय रूप को अभिव्यक्त करने के लिए प्रकृति सर्वथा उचित होता है। ऐसा करने के लिए कविगण प्रकृति का आलंकारिक चित्रण करते हैं। ऐसा कर वे विभिन्न भावों को अधिक तीव्र और प्रभावी बनाने में समर्थ होते हैं। महाकवि अश्वघोष द्वारा किए गए नारी सौंदर्य वर्णन में उनका प्रकृति के प्रति विशेष अनुराग देखने को मिलता है। सुंदरी के सौंदर्य चित्रण में वे प्रकृति का आलंकारिक वर्णन करते हुए कहते हैं-

तस्या मुखं तत्सतमालपत्रं ताम्राधरोष्ठं चिकुरायताक्षम्।
रक्ताधिकाग्रं पतितद्विरेफं सशैवलं पद्ममिवाबभासे॥[6]

कवि ने प्रकृति के रमणीय रूप के माध्यम से नारी के सौंदर्य वर्णन के लिए श्रेष्ठ व उपयुक्त उपमानों का कुशलतापूर्वक चयन किया है। सुंदरी का मुख तमाल पत्र से युक्त और अधर ताम्रवर्णी था। उसके नयन चंचल और विशाल थे। उसकी ऐसी मुखाकृति कमल के समान सुशोभित हो रहा था, जो शैवाल से युक्त था, जिसका अग्रभाग रक्त वर्ण था और जिस पर भौंरे बैठे हुए प्रतीत हो रहे थे। इस प्रसंग में कवि द्वारा वर्णित नारी सौंदर्य के प्रति विशेष आकर्षण और शैवाल से घिरे हुए कमल का प्रभावकारी व स्वाभाविक वर्णन किया गया है।

नारी के रमणीय और कमनीय रूप का वर्णन करने के लिए बहुधा अनेक उपमानों का प्रयोग किए जाने की परंपरा का निर्वहण कवियों द्वारा किया जाता रहा है। राज महलों में राज करने वाली नारियाँ विभिन्न स्त्रियों से घिरी हुई होती है। वे प्रायः चिंता मुक्त होती हैं। आतप व पीड़ा से मुक्त उनकी काया चमकती-दमकती रहती है। वे बिजली की कांति से युक्त प्रतीत होती हैं। महाकवि अश्वघोष ऐसी नारी के अनुपम सौंदर्य का चित्रांकन करते हुए कहते हैं- ताभिर्वृता हर्म्यतलेऽङ्गनाभिश्चिन्तातनुः सा सुतनुर्बभासे। शतह्रदाभिः परिवेष्टितेव शशाङ्कलेखा शरदभ्रमध्ये।।[7] प्रेम करने वालों के लिए प्रकृति प्रेम का आलंबन बन जाती है। प्रेमिका के न रहने पर प्रेमी प्रकृति के विभिन्न अंगों में अपनी भावनाओं को साकार करने की चेष्टा करता है। नंद फूलों से लदे हुए तिलक नामक पेड़ के शिखर पर बैठी कोयल को सहसा देखकर अट्टालिका का आश्रय लेकर खड़ी अपनी प्रिया शिखा की वह सहज कल्पना करने लगता है। अश्वघोष कहते हैं-

पुष्पावनद्धे तिलकद्रुमस्य दृष्ट्वान्यपुष्टां शिखरे निविष्टां।
संकल्पयामास शिखां प्रियायाः
शुक्लांशुकेऽट्टालमपाश्रितायाः॥[8]

नायक-नायिका के संयोगावस्था में किए जाने वाले प्रेमक्रियाकलापों का उद्दीप्त वर्णन करने में प्रकृति के सुंदर मनोहर रूप की महत्वपूर्ण भूमिका होती है किंतु वियोग की अवस्था में यह विरहाग्नि को उद्दीप्त और चंचल कर देती है। सौंदरनंद काव्य में नंद जब अपनी प्रिया सुंदरी के

वियोग में संतप्त रहता है, तब प्रकृति का सुंदर रूप उसे रुचिकर प्रतीत नहीं होता अपितु उसके विरह वेदना को उद्दीप्त कर अधिक विचलित कर देती है। गंधर्व वेश्याओं के समान सुगंध से परिपूर्ण गंध से युक्त पत्तों वाली वृक्षों ने सुगंध का प्रसार करते हुए भी भिन्न चित्त वाले व शोक संतप्त नंद के घ्राणेन्द्रिय को आकर्षित नहीं किया वरन् उसके हृदय को पीड़ित किया। विरह की अवस्था में प्रकृति का यह चित्र सामान्य स्थिति की तरह स्वाभाविक नहीं है। अश्वघोष नंद की ऐसी ही मनोदशा में प्रकृति के उद्दीपन को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं- गन्धं वमन्तोऽपि गन्धवर्णा गन्धर्ववेश्या इव गन्धपूर्णाः।

तस्यान्यचित्तस्य युगात्मकस्य घ्राणं न जह्रुर्हृदयं प्रतेपुः।।[9]

मोर, कोयल और भौंरे निर्जन वन प्रांत में अपनी उपस्थिति से वन की शून्यता को हर लेते हैं। अनुरक्त कण्ठ से मधुर स्वर करने वाले मोर, संतुष्ट और प्रसन्न कोयल तथा पुष्पों से मधु का सेवन करते, गुंजन करते भौंरों ने नंद के चित्त को चलायमान कर दिया।

संरक्तकण्ठैश्च विनीलकण्ठैस्तुष्टैः प्रहृष्टैः रपि चान्यपुष्टैः।
लेलिह्यमानैश्च मधु द्विरेफैः स्वनद्वनं तस्य मनो नुनोद।।[10]

समर्थ कवि प्रकृति के रूपों के माध्यम से विभिन्न चेष्टाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। वे कभी उसके सुंदर रूप का वर्णन करते हैं तो कभी प्रेमी प्रेमिका के प्रेम के उद्दीप्त रूप को निरूपित करने के लिए, कभी विरह की अवस्था में अपने संतप्त भावनाओं को स्वर देने के लिए, कभी मनोरंजन के लिए, कभी उपदेश के लिए। प्रकृति के विभिन्न उपादानों से शिक्षा या उपदेश ग्रहण करना प्राचीन परंपरा रही है। भारतीय संस्कृति में मित्रता, भाईचारा, बंधुत्व, दया, त्याग, प्रेम, समर्पण आदि अनेक गुण रचे-बसे हैं। इन्हीं गुणों की शिक्षा समय-समय पर विभिन्न कथा प्रसंगों एवं प्रकृति के माध्यम से आचार्यवरों के द्वारा दिया जाता रहा है। "कवि को उपमा रूपक तथा व्यतिरेकादि अलंकारों के द्वारा प्रतिपाद्य विषय की मनोहारिता को अभिव्यंजनापूर्ण बनाने के लिए प्राकृतिक सुंदरता की सच्ची परख करनी होती है। वह प्रकृति की ही वस्तुओं में सौंदर्य के कमनीय उपमानों का दर्शन करता है और सौंदर्य के सभी प्रसन्न उपमानों को प्रकृति के क्षेत्रों से संचित कर काव्यश्री का अभिनव श्रृंगार करता है।"[11] महाकवि अश्वघोष द्वारा प्रकृति के माध्यम से भारतीय संस्कृति के के विषय में ऐसे ही उपदेशात्मक वचन कहे गए हैं। सौंदरनंद काव्य में वे कहते हैं-

चलत्कदम्बे हिमवन्नितम्बे तरौ प्रलम्बे चमरो ललम्बे।
छेत्तुं विलग्नं न शशाक बालं कुलोद्गतां
प्रीतिमिवार्यवृत्तः॥[12]

हिमालय के नितंब पर अनेक कदंब के वृक्ष हैं। जो पवन के झोंके से हिलते-डुलते रहते हैं। ऐसे ही एक वृक्ष की शाखा पर चमर लटक रहा था। वहाँ शाखा में फँसी हुई अपनी पूँछ को काट नहीं रहा था। इसके माध्यम से कवि भारतीय आर्य संस्कृति में उत्तम गुणों से युक्त मित्र के उत्तम गुणों के विषय में उपमा देते हैं। उत्तम आचरण वाला व्यक्ति परंपरागत मित्रता को भंग नहीं करता है। यहाँ कवि प्रकृति के माध्यम से भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ गुणों में से एक मित्रता की महत्ता को अभिव्यक्त कर उसे अत्यंत सहज व प्रभावी रूप में प्रस्तुत किया है।

प्रकृति के सहज, स्वाभाविक वर्णन में कवि अपनी कल्पना व बुद्धि के प्रयोग से विभिन्न अलंकारों का प्रयोग करते हुए नवीन चमत्कार उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं। अश्वघोष प्रकृति के स्वाभाविक वर्णन के माध्यम से विविध भावनाओं को अपनी कल्पना शक्ति से अनुपम रूप देने में समर्थ कवि हैं। स्वर्ग में देवेंद्र के नंदनवन में लाल कमल वाले वृक्ष प्रदीप वृक्ष की भांति शोभित हो रहे हैं। खिले हुए नीलकमल वाले वृक्ष अभी-अभी उन्मीलित नेत्रों वाले हैं, ऐसे प्रतीत होते हैं। महाकवि अश्वघोष प्रकृति की ऐसी सुंदर दृश्यों की मौलिक व अनोखी कल्पना करते हुए लिखते हैं-

रक्तानि फुल्लाः कमलानि यत्र प्रदीपवृक्षा इव
भान्तिवृक्षाः।
प्रफुल्लनीलोत्पलरोहिणोऽन्ये सोन्मीलिताक्षा इव भान्ति
वृक्षाः॥[13]

दार्शनिक विचारधारा से ओत-प्रोत महाकवि अश्वघोष के काव्य में प्रकृति के रमणीय रूप का चित्रण अनायास देखने को मिलता है। यह प्रकृति की ही विशेषता है जिससे कवि उसके सौन्दर्य वर्णन से अपने को अछूता नहीं रख पाया। जहाँ कहीं भी उन्होंने प्रकृति के सौंदर्य का चित्रण किया है, वे दृश्य अनुपम और सजीव बन पड़े हैं।

संदर्भ-

- शर्मा, उमाशंकर. संस्कृत साहित्य का इतिहास. वाराणसी : चौखंबा भारती अकादमी, संस्करण : 2004, पृष्ठ 234.
- अश्वघोष. सौंदरनंद1/6-7.
- वही 1/9-10.
- वही 1/12.
- वही 1/13.
- वही 4/21.
- वही 6/37.
- वही 7/7.
- वही 7/10.
- वही 7/11.
- पांडेय. बृजमोहन. सौंदरनंद साहित्यिक एवं दार्शनिक गवेषणा. वाराणसी : चौखंबा संस्कृत सीरीज ऑफिस, संस्करण : 1972, पृष्ठ 130.
- अश्वघोष. सौंदरनंद10/11.
- वही 10/21.